कारक शब्द का अर्थ है क्रिया से सम्बन्ध रखने वाला अर्थात् कारक शब्द 'कृ' धातु से 'ण्वुल्' प्रत्यय लगाकर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है करने वाला। क्रिया को सम्पन्न करने में जो साधन का कार्य करे, उसे कारक कहते हैं इसीलिए कारक को साधन भी कहते हैं। किसी वाक्य में जिस संज्ञा, सर्वनाम आदि का क्रिया से सम्बन्ध होता है वही कारक कहलाता है। जिन शब्दों का क्रिया से सम्बन्ध नहीं, वे कारक नहीं कहलाते हैं जैसे–"देवदत्तः यज्ञदत्तस्य पुस्तकं पठति।" (देवदत्त यज्ञदत्त की पुस्तक पढ़ता है।) यहाँ देवदत्त पठन क्रिया का करने वाला है और पुस्तक पढ़ी जाती है। अतः वे दोनों कारक हुए, किन्तु यज्ञदत्त का पठन क्रिया से कोई सम्बन्ध नहीं, उसका सम्बन्ध है पुस्तक से, इसलिए यज्ञदत्त का पठन क्रिया से कोई सम्बन्ध नहीं, उसका सम्बन्ध है पुस्तक से, इसलिए यज्ञदत्त यहाँ कारक नहीं। इस प्रकार सम्बन्ध को कारक नहीं कह सकते। संस्कृत व्याकरण के अनुसार केवल छः कारक हैं–कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण जैसे कि कहा भी गया है–

कर्त्ता कर्म च करणं च सम्प्रदानं तथैव च।
अपादानाधिकरणमित्याहः कारकाणि षट्॥

कारक के सम्बन्ध को अभिव्यक्त करने के लिए जो प्रत्यय प्रयुक्त हो, इन्हें विभक्ति कहते हैं। सुप् प्रत्ययों में तीन-तीन (सु और जस्) आदि की विभक्ति संज्ञा है। ये विभक्तियाँ प्रथमा इत्यादि सात हैं। किस विभक्ति का प्रयोग किस अर्थ का बोध कराने के लिए किया जाता है। इसी का वर्णन यहाँ किया गया है।

प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा।

नियतोपस्थितकः प्रातिपादिकार्थः। मात्रशब्दस्य प्रत्येकं योगः। प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राद्याधिक्ये संख्यामात्रे च प्रथमा। स्वात्। उच्चैः। नीचैः। कृष्णः। श्रीः। ज्ञानम्। अलिङ्गा नियतलिङ्गश्च प्रातिपदिकार्थमात्र इत्यस्योदाहरणम् अनियतलिङगास्तु लिङ्गमाद्याधिक्यस्य। तटः। तटी। तटम्। परिमाणमात्रे, द्रोणो व्रीहिः। द्रोणरूपं यत्परिमाणं तत्परिच्छिन्नौ व्रीहिरित्यर्थः। प्रत्ययार्थे परिमाणे प्रकृत्यर्थोऽभेदेन संसर्गेण विशेषणम्, प्रत्ययार्थस्तु परिच्छेद्यपरिच्छेदकभावेन व्रीहो विशेषणम् इति विवेकः वचनं संख्या। एकः द्रौ। बहवः। इहोक्तार्थत्वाद् विभक्तेरप्राप्तौ वचनम्।

व्याख्या–प्रथमा विभक्ति शब्द से जिस अर्थ की नियमपूर्वक उपस्थिति होती है, वह प्रातिपदिकार्थ है। सूत्र में मात्र शब्द का प्रत्येक के साथ सम्बन्ध है। अतः केवल प्रातिपदिकार्थ लिङ्मात्र एवं परिमाणमात्र अधिक होने पर तथा संख्यामात्र को प्रकट करने के लिए प्रथमाविभक्ति होती है।

इस प्रकार, प्रथमा विभक्ति निम्न चार आर्थों में होती है–

(i) प्रातिपदिकार्थ मात्र (ii) लिङ्ग से युक्त प्रातिपदिकार्थ (iii) परिमाणमात्र से युक्त प्रातिपदिकार्थ (iv) वचन मात्र।

(i) **प्रातिपदिकार्थ मात्रे**–सार्थक शब्द को प्रातिपदिक कहते हैं। अंग्रेजी में जो शब्द की Crude form कहलाती है। वही प्रातिपदिक समझना चाहिए। जिस शब्द के बोलने पर जो अर्थ नियम से उपस्थित होता है, उसे प्रातिपदिकार्थ कहते हैं। शब्द के इस नियत अर्थ को प्रकट करने के लिए भी विभक्ति लगानी पड़ती है, क्योंकि संस्कृत में पद का ही प्रयोग किया जाता है, सुवन्त या तिङन्त के ही पद कहते हैं। (सुप्तिङन्तं पदं)। प्रातिपदिकार्थ में प्रथमा विभक्ति होती है।

जो शब्द अलिङ्ग है अर्थात् किसी लिङ्ग का बोध नहीं कराते अथवा जो नियत लिङ्ग वाले हैं अर्थात् जिनके साथ-साथ लिङ्ग का बोध भी नियत रूप से हो जाता है, वे ही इसके उदाहरण हैं। जैसे-उच्चैस्, नीचैस में

अलिङ्ग अव्यय शब्द है। इनमें प्रथमा विभक्ति होकर उच्चैस + सु सु लोप (अव्ययों से सुप् का लोप हो जाता है) और पद हो जाने से स् को विसर्ग उच्चैः आदि रूप होते।

कृष्ण शब्द से पुल्लिंग श्री शब्द से स्त्रीलिंग की तथा ज्ञान शब्द से नपुंसकलिंग की नियम से प्रतीति होती है। अतः ये नियतलिङ्ग के उदाहरण हैं। इनसे प्रथमा विभक्ति होकर कृष्ण, श्री तथा ज्ञानम् रूप होते हैं।

लिङ्गमात्राधिक्ये—प्रातिपदिकार्थ के बिना केवल लिङ्ग आदि की प्रतीति तो होती नहीं, अतः लिङ्मात्र का अधिक बोध कराने के लिए प्रथमा होती है, यह अर्थ समझना चाहिए। अनियत लिङ्ग वाले शब्द इसके उदाहरण हैं, जैसे—तट, तटी, तटम्—ये शब्द किनारा अर्थ के साथ-साथ क्रमशः पुल्लिंग आदि का भी बोध कराते हैं, जो इनका नियत अर्थ नहीं। तट शब्द अनियतलिङ् वाला है। इसका नियत लिङ्ग एक नहीं। कभी पुल्लिंग कभी स्त्रीलिंग हो जाता है। इस प्रकार तट आदि शब्द का नियत अर्थ तटत्व (किनारा) है उससे अधिक पुंस्त्व आदि का ज्ञान भी नहीं होता है। अतः ये लिङ्गमात्राधिक्य के उदाहरण हैं। यहाँ प्रातिपदिकार्थ से लिङ्मात्रा अधिक होने पर प्रथमा विभक्ति होती है।

परिमात्राधिक्ये—(उपर्युक्त रीति से) परिमाणमात्र अधिक होने से प्रथमा विभक्ति होती है। जैसे—'द्रोणी व्रीहिः'—द्रौण रूप से परिमाण उससे मापा गया, व्रीहि यह अर्थ है। द्रोण एक परिमाण (मात्र) का नाम है। यदि यहाँ द्रोण शब्द से प्रातिपदिकार्थ में प्रथमा विभक्ति होती तो द्रोण रूप जो परिमाण उससे अभिन्न व्रीहि अर्थ प्रतीत होता। क्योंकि यहाँ जो परिमाण है वह नाम प्रातिपदिक का अर्थ होता और नियम यह है कि समान विभक्ति वाले नाम पदों के अर्थों का अभेदान्वय हुआ करता है, किन्तु यहाँ द्रोण परिमाण से मापा हुआ 'व्रीहि' यह अर्थ अभीष्ट है। अतः परिमाणमात्राधिक्य में प्रथमा विभक्ति का विधान किया गया है। फलस्वरूप यहाँ द्रोण शब्द से होने वाली प्रथमा सामान्य परिमाण अर्थ को प्रकट करती है। द्रोण शब्द का अर्थ है। द्रोणा नामक परिमाण विशेष।

इसलिए द्रोण (प्रकृति) का अर्थ (परिमाण-विशेष) प्रथमा के अर्थ परिमाण सामान्य में अभेद सम्बन्ध से अन्वित हो जाता है और द्रोण रूप परिमाण यह अर्थ हो जाता है। अब परिमाण प्रत्यय का अर्थ है। अतः इस अर्थ का परिच्छेद-परिच्छेदमाप सम्बन्ध से व्रीहि के साथ अन्वय होता है और 'द्रोण' रूप परिमाण से मापा हुआ व्रीहि यह अर्थ हो जाता है।

वचनमात्रे—वचन का दूसरा अर्थ संख्या से है। केवल संख्या को प्रकट करने के लिए प्रथमा विभक्ति होती है, जैसे—एक, द्वौ, बहवः। यहाँ एकत्व, द्वित्व तथा बहुत्व आदि शब्दों से ही प्रकट है। प्रथमा विभक्ति के जो प्रत्यय सु, औ, जस् हैं उनका भी क्रमशः एकत्व, द्वित्व, बहुत्व अर्थ होता है। अतः उक्त अर्थों को पुनः प्रयोग नहीं होता। इस न्याय से प्रथमा विभक्ति नहीं होनी चाहिए थी, इसीलिए सूत्र में वचन ग्रहण किया गया है।

सम्बोधने च— इह प्रथमा स्यात्। हे राम॥ इति प्रथमा॥

व्याख्या—सम्बोधन का बोध कराने के लिए भी प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे—हे राम!

व्याख्या—पूर्व सूत्र में प्रथमा की अनुवृत्ति आती है। तदनुसार सम्बोधन में प्रथमा होती है। प्रातिपदिकार्थ से अधिक प्रतीति होने वाले अर्थ के कारण उसका अलग से निर्देश किया जा रहा है। सम्मुखीकरण को सम्बोधन कहा जाता है। उदाहरण हे राम। इस प्रयोग में सु विभक्ति का अर्थ सम्बोधन है। यहाँ सु विभक्ति आने के बाद एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः इस सूत्र से सु का लोप हो जाता है तथा हे शब्द सम्बोधन का प्रतीक हो जाता है।

2026.02.06 11:03